विविध सिविल
ए.एस. बैंस न्यायमूर्ति के समक्ष
जनता विद्या मंदिर गणपत राय रसीवासिया कॉलेज, चरखी - याचिकाकर्ता
बनाम
कुरुक्षेत्र विश्वविद्यालय अपने रजिस्ट्रार के माध्यम से और अन्य - प्रतिवादी
1974 की संशोधित सिविल रिट संख्या 5723।
११ फरवरी , 1975.

कुरुक्षेत्र विश्वविद्यालय अधिनियम (1956 का XII) - धारा 4 (1), 11, 13 (सी), 14 और 16 (2) - संविधि 10 (ई), 19 और 22 - विश्वविद्यालय - क्या किसी अन्य विश्वविद्यालय के विनियमों को अपनाने की शक्ति है - शिक्षकों की सेवा की शर्तों से संबंधित विनियमन - क्या वह कार्य-समिति (कार्यकारी परिषद) द्वारा अपनाया जा सकता है।

यह व्यवस्था दी गई है कि कुरुक्षेत्र विश्वविद्यालय अधिनियम, 1956 और उसके अंतर्गत बनाई गई संविधियों में कहीं भी इस आशय का निषेध नहीं है कि किसी अन्य विश्वविद्यालय के विनियमों को विश्वविद्यालय या उसके किसी प्राधिकारी द्वारा नहीं अपनाया जा सकता है। अधिनियम की योजना से पता चलता है कि विश्वविद्यालय और इसकी 'संसद' (न्यायालय) और 'कार्य-समिति' (कार्यकारी परिषद) के पास अपने संबंधित क्षेत्रों के भीतर किसी भी अध्यादेश और विधियों को तैयार करने, जोड़ने, बदलने या निरस्त करने के लिए पर्याप्त शक्तियां हैं। यदि विश्वविद्यालय के अधिकारी किसी अध्यादेश या क़ानून को बदल सकते हैं, निरस्त कर सकते हैं, जोड़ सकते हैं या संशोधित कर सकते हैं, तो उनके पास किसी अन्य विश्वविद्यालय के नियमों को अपनाने की अंतर्निहित शक्ति है क्योंकि फ्रेम करने की शक्ति में अपनाने की शक्ति शामिल है।

(पैरा 10)

यह माना जाता है कि अधिनियम की धारा 13 (सी) के तहत शिक्षकों की सेवा की शर्तों से संबंधित एक विनियमन को संविधि का हिस्सा बनाना है, लेकिन संविधि 10 (ई) के तहत ही कार्य-समिति (कार्यकारी परिषद) को ऐसे मामलों से निपटने की शक्ति दी गई है। संविधि 22 यह स्पष्ट करती है कि विश्वविद्यालय के शिक्षकों में विश्वविद्यालय के नियुक्त शिक्षक और मान्यता प्राप्त संबद्ध कॉलेजों के शिक्षक दोनों शामिल हैं और 'कार्य-समिति' (कार्यकारी परिषद) के पास अध्यादेश तैयार करने की शक्ति और अधिकार क्षेत्र है। अधिनियम के विभिन्न उपबंधों और संविधियों को एक साथ पढ़ने के लिए एकमात्र सामंजस्यपूर्ण निर्माण यह दिया जा सकता है कि एक अध्यादेश शिक्षकों की सेवा की शर्तों से निपट सकता है और इसे 'कार्य-समिति' (कार्यकारी परिषद) द्वारा तैयार या अपनाया जा सकता है। इस प्रकार शिक्षकों की सेवा की शर्तों से संबंधित एक विनियमन को 'कार्य-समिति' (कार्यकारी परिषद) द्वारा अपनाया जा सकता है।

(पैरा 12 और 13)।

भारत के संविधान के अनुच्छेद 226 और 227 के तहत संशोधित याचिका, जिसमें प्रार्थना की गई है कि सर्टिओरारी, मंडामस या किसी अन्य उचित रिट, आदेश या निर्देश की रिट जो उन्होंने दिनांक 17 अप्रैल, 1974 और 3 सितंबर, 1974 को आक्षेपित अनुलग्नक पी 2 और पी 3 को रद्द करने के लिए जारी की है और प्रतिवादी संख्या 1 और 2 मध्यस्थता कार्यवाही के साथ आगे न बढ़ें और आगे प्रार्थना करें कि अनुलग्नक पी 1 से पी 7 के रूप में चिह्नित दस्तावेजों की प्रमाणित प्रतियां दाखिल करें। इस रिट याचिका को समाप्त किया जाए और यह भी प्रार्थना की कि प्रतिवादियों को नोटिस की सेवा भी ऐसे नियमों और शर्तों पर दी जाए जो इस माननीय

न्यायालय को मामले की परिस्थितियों में उचित और सही लगती हैं और आगे प्रार्थना करता है कि रिट याचिका के निर्णय तक मध्यस्थता कार्यवाही पर भी रोक लगाने का आदेश दिया जाए।
याचिकाकर्ता की ओर से वकील जीसी मित्तल।
जे. एल. गुप्ता, एडवोकेट (ए.के. अरोड़ा, एडवोकेट, उनके साथ), प्रतिवादी संख्या 1 के लिए। 1. ओ.पी. गोयल, वकील, प्रतिवादी संख्या 3 के लिए।

निर्णय

बैंस, न्यायमूर्ति

(1) याचिकाकर्ता, जनता विद्या मंदिर गणपत राय रासीवासिया कॉलेज, जो एक पंजीकृत संस्थान है ने अपनी प्रबंध समिति के अध्यक्ष के माध्यम से, कुरुक्षेत्र विश्वविद्यालय के रजिस्ट्रार, कुरु-क्षेत्र विश्वविद्यालय के कुलपति और लाजपत राय सिंघल के माध्यम से कुरुक्षेत्र विश्वविद्यालय के खिलाफ भारत के संविधान के अनुच्छेद 226 और 227 के तहत वर्तमान याचिका दायर की है। याचिका के स्वीकृत तथ्य निम्नानुसार हैं:-

(2) श्री लाजपत राय सिंघल, प्रतिवादी संख्या 3,5 को याचिकाकर्ता द्वारा भौतिकी में वरिष्ठ व्याख्याता के रूप में नियुक्त किया गया था और उनकी सेवाओं को 18 अप्रैल 1974 को समाप्त कर दिया गया था। समाप्ति आदेश में कारण दिया गया था कि चूंकि सत्र 1974-75 से B.Sc (मेडिकल और नॉन-मेडिकल) कक्षाएं बंद कर दी गई थीं, इसलिए उनका पद अधिशेष हो गया था। प्रतिवादी नंबर 3 ने पंजाब विश्वविद्यालय कैलेंडर, 1973 के खंड 1 के अध्याय 8-ई के विनियमन 12.2 के तहत पंजाब विश्वविद्यालय में अपने बर्खास्तगी आदेश के खिलाफ अपील दायर की। पंजाब विश्वविद्यालय ने याचिकाकर्ता को प्रतिवादी नंबर 3 की सेवाओं को समाप्त नहीं करने का निर्देश दिया और प्रबंधन को इस आशय का एक पत्र भेजा, लेकिन याचिकाकर्ता इसके लिए सहमत नहीं हुआ। इस बीच, हरियाणा राज्य के क्षेत्र में स्थित पंजाब विश्वविद्यालय से संबद्ध सभी कॉलेजों को 30 जून, 1974 से हरियाणा सरकार की एक अधिसूचना द्वारा कुरुक्षेत्र विश्वविद्यालय में स्थानांतरित कर दिया गया था। इस बीच, हरियाणा राज्य के क्षेत्र में स्थित पंजाब विश्वविद्यालय से संबद्ध सभी कॉलेजों को 30 जून, 1974 से हरियाणा सरकार की एक अधिसूचना द्वारा कुरुक्षेत्र विश्वविद्यालय में स्थानांतरित कर दिया गया था। पंजाब विश्वविद्यालय ने 2 जुलाई, 1974 को प्रतिवादी नंबर 3 को सूचित किया कि अधिसूचना से उत्पन्न अजीब स्थिति के कारण, मध्यस्थता समिति नियुक्त करना संभव नहीं है क्योंकि याचिकाकर्ता के कॉलेज पर अब उसका अधिकार क्षेत्र नहीं है और इस प्रकार प्रतिवादी नंबर 3 की अपील पंजाब विश्वविद्यालय द्वारा मामले में उचित कार्रवाई के लिए कुरुक्षेत्र विश्वविद्यालय को भेजी गई थी। 25 जुलाई, 1974 को, प्रतिवादी नंबर 3 ने कुरुक्षेत्र विश्वविद्यालय को प्रतिनिधित्व दिया कि उनके मामले को देखा जाए और फैसला किया जाए। कुरु-क्षेत्र विश्वविद्यालय ने याचिकाकर्ता के कॉलेज के प्रिंसिपल को संबोधित एक पत्र भेजा, जिसमें प्रतिवादी नंबर 3 द्वारा किए गए अभ्यावेदन की एक प्रति संलग्न की गई, जिसमें याचिकाकर्ता को सात दिनों के भीतर टिप्पणी देने के लिए कहा गया। याचिकाकर्ता ने 20 अगस्त, 1974 को टिप्पणी भेजी कि चूंकि अपील पंजाब विश्वविद्यालय कैलेंडर, खंड -1, अध्याय VIII-ई के विनियमन 12.2 द्वारा निर्धारित समय के भीतर दायर नहीं की गई थी, इसलिए उनकी सेवा की समाप्ति का आदेश पूर्ण हो गया है और इसे देखा नहीं जा सकता है; कुरुक्षेत्र विश्वविद्यालय अधिनियम, 1956 (जिसे बाद में संक्षेप में 'अधिनियम' के रूप में संदर्भित किया गया) के तहत गठित कार्य-समिति (कार्यकारी परिषद) ने 17 अप्रैल, 1974 को अपने विश्वविद्यालय के कुलपति की सिफारिशों को निम्नानुसार अपनाया: - मैं

"कुलपति की सिफारिशों पर विचार किया गया कि पंजाब विश्वविद्यालय निम्नलिखित विषयों पर नियम बनाता है, जब तक ' इन्हें कार्यकारी परिषद द्वारा संशोधित किया जाता है, अपनाया जाता है कुरुक्षेत्र विश्वविद्यालय द्वारा मान्यता प्राप्त हरियाणा राज्य के गैर-सरकारी कॉलेजों में शिक्षकों/प्रधानाचार्यों के लिए इस संशोधन के साथ कि जहां कहीं भी सिंडिकेट शब्द हो, के स्थान पर कार्यकारी परिषद शब्द रखा जाएगा:- "

i)शिक्षकों की सेवा और आचरण।
ii)छोड़ना। ' '
iii)भविष्य निधि।
iv)प्रिंसिपल के रूप में नियुक्ति के लिए योग्यता।

संकल्प लिया गया कि कुलपति द्वारा की गई सिफारिश को मंजूरी दी जाए।
कुरुक्षेत्र विश्वविद्यालय की कार्य समिति (कार्यकारी परिषद) ने 2 सितंबर, 1974 को पूर्वोक्त विनियम में इस आशय से संशोधन किया कि अपील दायर करने की अवधि 30 सितंबर, 1974 तक होगी, भले ही अपील को प्राथमिकता दी गई हो या नहीं।
विश्वविद्यालय के संशोधित विनियम को निम्नानुसार पुन: प्रस्तुत किया गया है -
"12.2. विश्वविद्यालय में अपील दायर करने की अवधि शिक्षक को सेवा समाप्ति का आदेश दिए जाने की तारीख से 30 दिन होगी।
परन्तु संबद्ध कॉलेजों का नियंत्रण पंजाब विश्वविद्यालय से इस विश्वविद्यालय को हस्तांतरित किए जाने के मद्देनजर, ऐसी अपीलों पर इस वर्ष 30 सितम्बर, 1974 के दिन तक एक बहुत ही विशेष मामले के रूप में विचार किया जाएगा, भले ही इस तथ्य पर ध्यान दिए बिना कि पंजाब विश्वविद्यालय को पहले ऐसी अपील को प्राथमिकता दी गई थी या नहीं।
दो) इस बीच, कुरुक्षेत्र विश्वविद्यालय ने मध्यस्थता समिति नियुक्त की और याचिकाकर्ता को अपने नामांकित व्यक्ति को नियुक्त करने के लिए भी सूचित किया, लेकिन याचिकाकर्ता ने मध्यस्थता समिति में किसी भी नामांकित व्यक्ति को नियुक्त नहीं किया। मध्यस्थता समिति ने प्रतिवादी संख्या 3 और विश्वविद्यालय को भी पूरा मौका देने के बाद 19 नवंबर, 1974 को अपने फैसले की घोषणा की। याचिकाकर्ता ने नोटिस के बावजूद मध्यस्थता समिति के समक्ष कार्यवाही में भाग नहीं लिया। यह याचिका संबद्ध कॉलेजों में शिक्षकों की सेवा शर्तों से संबंधित पंजाब विश्वविद्यालय के नियमों को अपनाने और इसके बाद के संशोधन के खिलाफ है, इसलिए यह याचिका दायर की गई है।
(3) याचिकाकर्ता के विद्वान वकील ने निम्नलिखित चार तर्क उठाए हैं: -

i) विश्वविद्यालय के पास पंजाब विश्वविद्यालय के विनियमन को अपनाने की कोई शक्ति नहीं है, हालांकि विश्वविद्यालय के पास नए विनियम बनाने का अधिकार है।
ii) यदि किसी कारण से यह न्यायालय मानता है कि विश्वविद्यालय को पंजाब विश्वविद्यालय के किसी भी विनियमन को अपनाने का अधिकार है, तो करया समितियों (कार्यकारी परिषद) के पास इसे अपनाने का कोई अधिकार क्षेत्र नहीं था क्योंकि इस तरह के विनियमन को केवल 'संसद' (न्यायालय) द्वारा कुलपति के अनुमोदन से अपनाया जा सकता है, जैसा कि अधिनियम 1956, की धारा 14 (5) के तहत आवश्यक है।
iii) विश्वविद्यालय के पास अंगीकृत अध्यादेश या संविधि को पूर्वव्यापी प्रभाव देने का कोई अधिकार नहीं था। विनियमन का आक्षेपित संशोधन इसे पूर्वव्यापी प्रभाव देता है और ऐसा नहीं किया जा सकता है।
(iv) यह मानते हुए कि समाप्ति का आदेश गलत है, प्रतिवादी द्वारा दावा की गई राहत नहीं दी जा सकती है।
(3) मैंने विश्वविद्यालय द्वारा पेश किए गए रिकॉर्ड को ध्यान से देखा है और याचिकाकर्ता और प्रतिवादियों के वकील को भी विस्तार से सुना है।

(4) अपने पहले तर्क के समर्थन में, विद्वान वकील ने कहा कि उत्तरदाताओं के पास पंजाब विश्वविद्यालय के विनियमन को अपनाने के लिए कानून में कोई अधिकार नहीं था। वह आगे कहते हैं कि चूंकि अधिनियम में किसी अन्य विश्वविद्यालय के विनियमन को अपनाने के लिए कोई विशिष्ट

प्रावधान नहीं है, इसलिए इसे अपनाया नहीं जा सकता है। अपने तर्क का समर्थन करने के लिए उन्होंने पंजाब पुनर्गठन अधिनियम की धारा 87, 88 और 89 का संदर्भ दिया है और डॉ. हरकिशन सिंह बनाम भारत संघ और अन्य (1) में इस न्यायालय के पूर्ण पीठ प्राधिकरण पर भरोसा किया है।

(2) मुझे याचिकाकर्ता के विद्वान वकील के इस तर्क में कोई दम नजर नहीं आता। वर्तमान मामले के तथ्य पूर्ण पीठ मामले के तथ्यों के समान नहीं हैं। पूर्ण पीठ मामले में प्रासंगिक टिप्पणियों को नीचे पुन: प्रस्तुत किया गया है।

"शब्द 'लागू' का अर्थ वास्तविक संचालन में है, अर्थात, इसके प्रावधानों के अनुसार अधिनियम के तहत कार्रवाई की जा सकती है। चूंकि यह अधिनियम अब केंद्र शासित प्रदेश चंडीगढ़ या उसके किसी भी हिस्से में शामिल क्षेत्रों में लागू नहीं था, इसलिए 31 अक्टूबर, 1966 को चंडीगढ़ में अधिनियम के किसी भी प्रावधान के तहत कोई कार्रवाई नहीं की जा सकी। यदि यह अधिनियम पूरे या अब संघ शासित प्रदेश चंडीगढ़ में शामिल क्षेत्रों के किसी भी हिस्से में लागू नहीं था, जैसा कि मैंने ऊपर कहा है, तो अधिनियम में क्षेत्र के संदर्भों को पुनर्गठन के बाद केंद्र शासित प्रदेश चंडीगढ़ के संदर्भ के रूप में नहीं पढ़ा जा सकता है, क्योंकि धारा 88 के तहत, दो शर्तें आवश्यक हैं, यही है, अधिनियम उन क्षेत्रों में विस्तारित या लागू होता था और उन क्षेत्रों में लागू होता था। यहां तक कि अगर यह स्वीकार किया जाता है कि अधिनियम अब केंद्र शासित प्रदेश चंडीगढ़ में शामिल क्षेत्रों पर विस्तारित या लागू होता है क्योंकि ये क्षेत्र 'मौजूदा पंजाब राज्य' का हिस्सा थे, तो अधिनियम इन क्षेत्रों में लागू नहीं था क्योंकि इन क्षेत्रों को शहरी क्षेत्र में घोषित करने वाली धारा 2 (जे) के तहत कोई अधिसूचना कभी जारी नहीं की गई थी। इस कारण से, पुनर्गठन अधिनियम की धारा 88 के तहत, अधिनियम की धारा 2 (1) में 'पंजाब' के स्थान पर 'केंद्र शासित प्रदेश चंडीगढ़' शब्द नहीं पढ़ा जा सकता है।

(1) सीडब्ल्यू 266/74 पर 9 अक्तूबर, 1974 को निर्णय लिया गया।

(3) पंजाब पुनर्गठन अधिनियम के प्रावधानों की व्याख्या एक किराया मामले में की गई थी और पूर्ण पीठ द्वारा दिए गए निष्कर्ष वर्तमान मामले के तथ्यों पर लागू नहीं होते हैं क्योंकि पूर्वी पंजाब शहरी किराया प्रतिबंध अधिनियम 1 नवंबर, 1965 को चंडीगढ़ में लागू नहीं किया गया था। हरियाणा सरकार की अधिसूचना के परिणामस्वरूप, हरियाणा राज्य में स्थित कॉलेजों को पंजाब, विश्वविद्यालय के अधिकार क्षेत्र से स्थानांतरित कर दिया गया था और 1 जुलाई, 1974 से कुरुक्षेत्र विश्वविद्यालय से संबद्ध किया गया था। कुरुक्षेत्र विश्वविद्यालय वर्ष 1956 में पंजाब राज्य द्वारा पारित एक क़ानून द्वारा बनाया गया था। हरियाणा सरकार की अधिसूचना द्वारा केवल इसके अधिकार क्षेत्र में वृद्धि की गई थी। इसके अलावा, अधिनियम की धारा 16 (2) के तहत, 'कार्य समिति' (कार्यकारी परिषद) के पास किसी भी समय किसी भी अध्यादेश को संशोधित करने, निरस्त करने या जोड़ने की शक्ति है। अधिनियम की धारा 16(2) इस प्रकार है:-

"16 (2) अध्यादेशों को 'कार्य समिति' (कार्यकारी परिषद) द्वारा किसी भी समय संशोधित, निरस्त या जोड़ा जा सकता है: "बशर्ते कि- कोई अध्यादेश नहीं बनाया जाएगा- विश्वविद्यालय परीक्षा के समकक्ष के रूप में मान्यता प्राप्त होने वाली परीक्षाओं को निर्धारित करने वाले छात्रों के प्रवेश या नामांकन को प्रभावित करना; नहीं तो परीक्षकों की शर्तों, नियुक्ति के तरीके या कर्तव्यों या परीक्षाओं के संचालन या मानक या अध्ययन के किसी भी पाठ्यक्रम को प्रभावित करना; जब तक कि ऐसे अध्यादेश का मसौदा शिक्षा समिति (अकादमिक परिषद) द्वारा प्रस्तावित नहीं किया गया है।

"16 (2) अध्यादेशों को 'कार्य समिति' (कार्यकारी परिषद) द्वारा किसी भी समय संशोधित, निरस्त या जोड़ा जा सकता है:

"बशर्ते कि-

(अ) कोई अध्यादेश नहीं बनाया जाएगा- '

(1) छात्रों के प्रवेश या नामांकन को प्रभावित करना, विश्वविद्यालय परीक्षा के समकक्ष के रूप में मान्यता प्राप्त होने वाली परीक्षाओं को निर्धारित करना या

(2) परीक्षकों की शर्तों, नियुक्ति के तरीके या कर्तव्यों या परीक्षाओं के संचालन या मानक या अध्ययन के किसी भी पाठ्यक्रम को प्रभावित करना; जब तक कि ऐसे अध्यादेश का मसौदा शिक्षा समिति (अकादमिक परिषद) द्वारा प्रस्तावित नहीं किया गया है।
ख) कार्य-समिति (कार्यकारी परिषद) को उपधारा (2) के अधीन 'शिक्षा-समिति' (अकादमिक परिषद) द्वारा प्रस्तावित किसी मसौदे में संशोधन करने की शक्ति नहीं होगी, बल्कि वह इसे किसी भी संशोधन के साथ, पूर्ण रूप से या आंशिक रूप से, पुनर्विचार के लिए 'शिक्षा-समिति' (अकादमिक परिषद) को लौटा सकती है, जिसे कार्य-समिति (कार्यकारी परिषद) दूसरी बार प्रस्तुत किए जाने के बाद सुझा सकती है या अस्वीकार कर सकती है। जहां कार्य-समिति (कार्यकारी परिषद) ने 'शिक्षा-समिति' (अकादमिक परिषद) द्वारा प्रस्तावित अध्यादेश को अस्वीकार कर दिया है, तो वह 'संसद' (न्यायालय) में अपील कर सकती है, जो 'कार्य-समिति' (कार्यकारी परिषद) के विचार प्राप्त करने के बाद, यदि वह अध्यादेश को मंजूरी देती है, तो अध्यादेश बना सकती है और इसे मंजूरी के लिए चांसलर को प्रस्तुत कर सकती है।
कार्य-समिति (कार्यकारी परिषद) द्वारा बनाए गए सभी 'शासन' (अध्यादेश) उस तारीख से प्रभावी होंगे जो वह निर्देश दे, लेकिन इस तरह से बनाया गया प्रत्येक अध्यादेश जल्द से जल्द 'संसद' (न्यायालय) को प्रस्तुत किया जाएगा और 'संसद' (न्यायालय) द्वारा अपनी अगली सफल बैठक में विचार किया जाएगा। 'संसद' (न्यायालय) के पास ऐसी बैठक में उपस्थित कम से कम दो-तिहाई सदस्यों के बहुमत से पारित प्रस्ताव द्वारा ऐसे किसी अध्यादेश को संशोधित या रद्द करने की शक्ति होगी और ऐसा अध्यादेश, ऐसे संकल्प की तारीख से, जैसा भी मामला हो, संशोधित या रद्द कर दिया जाएगा।

(4) इस खंड को पढ़ने से यह स्पष्ट है कि विश्वविद्यालय की कार्य-समिति किसी भी समय किसी भी अध्यादेश में संशोधन, परिवर्तन या जोड़ सकती है। इसी प्रकार, अधिनियम की धारा 14(2) के अधीन विश्वविद्यालय का 'संसद' (न्यायालय) समय-समय पर नई या अतिरिक्त संविधियां बना सकता है या इस धारा में उपबंधित रीति से संविधियों में संशोधन या निरसन कर सकता है। अधिनियम की धारा 4 (1) के तहत, विश्वविद्यालय के पास क़ानूनों, अध्यादेशों या विनियमों को तैयार करने और उपरोक्त सभी या किसी भी उद्देश्य के लिए इसे संशोधित करने या रद्द करने की शक्ति है। अधिनियम की धारा 4(1) को नीचे प्रस्तुत किया गया है:-
4. विश्वविद्यालय निम्नलिखित शक्तियों का प्रयोग करेगा और निम्नलिखित कर्तव्यों का पालन करेगा, अर्थात्:-
(एक) संविधियों, अध्यादेशों या विनियमों को तैयार करना और उपरोक्त सभी या किसी भी उद्देश्य के लिए इसे बदलना, संशोधित करना या रद्द करना।
(5) मैंने पूरे अधिनियम और संविधियों का अध्ययन किया है जिसमें कहीं भी इस आशय का निषेध नहीं है कि किसी अन्य विश्वविद्यालय के विनियमन को विश्वविद्यालय या उसके किसी प्राधिकारी द्वारा अपनाया या कॉपी नहीं किया जा सकता है। योजना और इन धाराओं को पढ़ने से पता चलता है कि विश्वविद्यालय और इसकी 'संसद' (न्यायालय) और 'कार्य-समिति' (कार्यकारी परिषद) के पास अपने संबंधित क्षेत्रों के भीतर किसी भी अध्यादेश, संविधियों को तैयार करने, जोड़ने, बदलने या निरस्त करने के लिए पर्याप्त शक्तियां हैं। यदि विश्वविद्यालय के अधिकारी किसी अध्यादेश या क़ानून को बदल सकते हैं, निरस्त कर सकते हैं या जोड़ या संशोधित कर सकते हैं, तो उसके पास किसी अन्य विश्वविद्यालय के विनियमन को अपनाने की अंतर्निहित शक्ति है। मामले की परिस्थितियों में, यह उचित लगता है कि पंजाब विश्वविद्यालय के नियमों को अपनाना संबद्ध कॉलेजों से संबंधित कानून की निरंतरता के हित में है क्योंकि ये पहले पंजाब विश्वविद्यालय के अधीन थे और अब अधिसूचना जारी होने पर, इन्हें कुरुक्षेत्र विश्वविद्यालय में स्थानांतरित कर दिया गया है और यदि पूरी तरह से नए नियम बनाए जाते हैं तो इससे कठिनाई हो सकती है और जटिलताएं और शैक्षणिक अराजकता पैदा हो

सकती है। इसलिए मेरा मानना है कि विश्वविद्यालय के पास आक्षेपित संकल्प को अपनाने का अधिकार और शक्ति थी क्योंकि फ्रेम करने की शक्ति में अपनाने की शक्ति शामिल है।

(6) विद्वान वकील का अगला तर्क यह है कि वर्तमान मामले में यह 'कार्य-समिति' (कार्यकारी परिषद) है जिसने लागू विनियमन को अपनाया था, जबकि इस तरह के विनियमन को 'संसद' (न्यायालय) द्वारा अपनाया जा सकता है। उनका मुख्य तर्क यह है कि चूंकि विनियमन विश्वविद्यालय के शिक्षकों की सेवा की शर्तों से संबंधित है, इसलिए इस मामले को केवल एक क़ानून में शामिल किया जा सकता है, अध्यादेश में नहीं। उन्होंने अधिनियम की धारा 13 (सी) और 14 पर अपनी निर्भरता रखी है। मुझे इस तर्क में भी कोई दम नजर नहीं आता। अधिनियम की धारा 13(ग) निम्नलिखित शब्दों में है :-

"13. इस अधिनियम के उपबन्धों के अधीन रहते हुए, विधि (संविधियाँ) निम्नलिखित सभी या किन्हीं विषयों के लिए उपबंध कर सकेगी, अर्थात् :-

** * * * * * * *

(ग) सेवा की शर्तें, पेंशन या भविष्य निधि का गठन और विश्वविद्यालय के अधिकारियों, शिक्षकों और अन्य कर्मचारियों के लाभ के लिए बीमा योजनाएं;

खंड । का उल्लेख करना भी उचित है! जो निम्नलिखित शब्दों में है:-

11. 'कार्य-समिति' (कार्यकारी परिषद) विश्वविद्यालय का कार्यकारी निकाय होगा, और इसके संविधान और शक्तियां, साथ ही इसके सदस्यों की पदावधि की शर्तें संविधियों द्वारा निर्धारित की जाएंगी।

संविधि 10(ङ) इस प्रकार है :-

10. 'कार्य-समिति' (कार्यकारी परिषद) –

(ङ) विश्वविद्यालय के अधिकारियों और शिक्षकों को नियुक्त करेगा और उनके कर्तव्यों और उनकी सेवा की शर्तों को परिभाषित करेगा और इन पदों पर अस्थायी रिक्तियों को भरने का प्रावधान करेगा।

(12) इन धाराओं को पढ़ने से यह स्पष्ट होता है कि धारा 13(ग) के तहत ऐसा मामला संविधि का हिस्सा बनता है लेकिन संविधि 10 (ई) के तहत ही कार्य-समिति (कार्यकारी परिषद) को ऐसे मामलों से निपटने की शक्ति दी गई है। इसलिए, विद्वान वकील के तर्क में कोई दम नहीं है और 'कार्य-समिति' (कार्यकारी परिषद) शिक्षकों की सेवा शर्तों से संबंधित अध्यादेश तैयार करने के लिए पूरी तरह से सक्षम है। विद्वान वकील का कहना है कि क़ानून 10 (ई) केवल विश्वविद्यालय के शिक्षकों की विशिष्ट नियुक्ति से संबंधित है और संबद्ध कॉलेजों के शिक्षकों से संबंधित नहीं है। विद्वान-वकील का यह तर्क भ्रामक है। संविधि 22 शिक्षकों को परिभाषित करती है और निम्नलिखित शब्दों में है:-

(1) विश्वविद्यालय के शिक्षक दो वर्गों के होंगे, अर्थात्:-

i विश्वविद्यालय के नियुक्त शिक्षक।

ii विश्वविद्यालय के मान्यता प्राप्त शिक्षक।

(2). 'विश्वविद्यालय के नियुक्त शिक्षक' या तो होंगे- (क) विश्वविद्यालय द्वारा भुगतान किए गए विश्वविद्यालय के सेवक और 'कार्य समिति' (कार्यकारी परिषद) द्वारा प्रोफेसर, रीडर या व्याख्याता के रूप में नियुक्त या अन्यथा विश्वविद्यालय के शिक्षकों के रूप में; नहीं तो

(ख) कार्य-समिति (कार्यकारी परिषद) द्वारा मानद प्रोफेसरों, रीडरों, या व्याख्याताओं के रूप में या अन्यथा विश्वविद्यालय के शिक्षकों के रूप में नियुक्त व्यक्ति।

(3) 'विश्वविद्यालय के मान्यता प्राप्त शिक्षक' होंगे-

a) विश्वविद्यालय के एक मान्यता प्राप्त कॉलेज के कर्मचारियों के सदस्य; नहीं तो

एक मान्यता प्राप्त संस्थान के कर्मचारियों के सदस्य जो विश्वविद्यालय द्वारा अनुमोदित अध्ययन के स्नातक और स्नातकोत्तर पाठ्यक्रम प्रदान करते हैं: बशर्ते कि किसी मान्यता प्राप्त कॉलेज या संस्थान के स्टाफ के ऐसे किसी भी सदस्य को मान्यता प्राप्त शिक्षक नहीं माना जाएगा जब तक कि-

उन्हें 'कार्य-समिति' (कार्यकारी परिषद) द्वारा प्रोफेसर, रीडर या विश्वविद्यालय के शिक्षक के रूप में किसी अन्य क्षमता में मान्यता प्राप्त है; और

स्नातक और स्नातकोत्तर पाठ्यक्रमों से संबंधित अपने स्वयं के कॉलेज या संस्थान में उनके शिक्षण को विश्वविद्यालय द्वारा अनुमोदित किया जाता है।
(1) विश्वविद्यालय के शिक्षक दो वर्गों के होंगे, - अर्थात्: –
(१) विश्वविद्यालय के नियुक्त शिक्षक।

(२) विश्वविद्यालय के मान्यता प्राप्त शिक्षक।
(2). 'विश्वविद्यालय के नियुक्त शिक्षक' या तो होंगे- (क) विश्वविद्यालय द्वारा भुगतान किए गए और 'कार्य समिति' (कार्यकारी परिषद) द्वारा नियुक्त विश्वविद्यालय के सेवक
प्रोफेसरों, पाठकों या व्याख्याताओं के रूप में या अन्यथा विश्वविद्यालय के शिक्षकों के रूप में; नहीं तो
(ख) कार्य-समिति (कार्यकारी परिषद) द्वारा मानद प्रोफेसरों, पाठकों, या < या अन्यथा विश्वविद्यालय के शिक्षकों के रूप में नियुक्त व्यक्ति।
(3) 'विश्वविद्यालय के मान्यता प्राप्त शिक्षक' होंगे-
(अ) विश्वविद्यालय के एक मान्यता प्राप्त कॉलेज के कर्मचारियों के सदस्य; नहीं तो
(आ) एक मान्यता प्राप्त संस्थान के कर्मचारियों के सदस्य जो विश्वविद्यालय द्वारा अनुमोदित अध्ययन के स्नातक और स्नातकोत्तर पाठ्यक्रम प्रदान करते हैं:
बशर्ते कि किसी मान्यता प्राप्त कॉलेज या संस्थान के स्टाफ के ऐसे किसी भी सदस्य को मान्यता प्राप्त शिक्षक नहीं माना जाएगा जब तक कि-
(अ) उन्हें 'कार्य-समिति' (कार्यकारी परिषद) द्वारा प्रोफेसर, रीडर या विश्वविद्यालय के शिक्षक के रूप में किसी अन्य क्षमता में मान्यता प्राप्त है; और
(आ) स्नातक और स्नातकोत्तर पाठ्यक्रमों से संबंधित अपने स्वयं के कॉलेज या संस्थान में उनके शिक्षण को विश्वविद्यालय द्वारा अनुमोदित किया जाता है।
(13) संविधि 22 के अध्ययन से स्पष्ट है कि विश्वविद्यालय के शिक्षकों में विश्वविद्यालय के नियुक्त शिक्षक और विश्वविद्यालय के मान्यता प्राप्त शिक्षक दोनों शामिल हैं और संविधि 10 के तहत, 'कार्य-समिति' (कार्यकारी परिषद) के पास अध्यादेश तैयार करने की शक्ति और अधिकार क्षेत्र है। यह संविधि 19 द्वारा और स्पष्ट है, जो विशेष रूप से विश्वविद्यालय परिसर के शिक्षण पदों पर नियुक्तियों से संबंधित है। याचिकाकर्ता के विद्वान वकील का मुख्य तर्क यह है कि चूंकि इस तरह के मामले को केवल एक क़ानून में शामिल किया जा सकता है और क़ानून को 'कार्य-समिति' (कार्यकारी परिषद) द्वारा तैयार नहीं किया जा सकता है, इसलिए, लागू संशोधित अध्यादेश अवैध है और क़ानून केवल 'संसद' (न्यायालय) द्वारा तैयार किए जा सकते हैं, न कि 'कार्य-समिति' द्वारा। जैसा कि पहले चर्चा की गई है, अधिनियम और ऊपर उल्लिखित संविधियों का इरादा काफी स्पष्ट है।
एक साथ पढ़ने से, इन विभिन्न प्रावधानों को एक साथ पढ़ने से एकमात्र सामंजस्यपूर्ण निर्माण यह दिया जा सकता है कि अध्यादेश शिक्षकों की सेवा की शर्तों से निपट सकता है और इसे 'कार्य-सामी' (कार्यकारी परिषद) द्वारा तैयार या अपनाया जा सकता है।
(14) याचिकाकर्ता के वकील द्वारा उठाया गया तीसरा तर्क यह है कि 'कार्य-4 समिति' (कार्यकारी परिषद) द्वारा किया गया संशोधन अध्यादेश को पूर्वव्यापी प्रभाव देता है जिसे 'कार्य-समिति' (कार्यकारी परिषद) द्वारा कानूनी रूप से नहीं दिया जा सकता है। इस विवाद में भी कोई दम नहीं है क्योंकि संशोधन कोई पूर्वव्यापी प्रभाव नहीं देता है। यह संशोधन केवल संबद्ध कॉलेजों के शिक्षकों के साथ न्याय करने के लिए किया गया है, जो पहले पंजाब विश्वविद्यालय के अधिकार क्षेत्र में थे और बाद में हरियाणा सरकार की अधिसूचना के संचालन से कुरु-क्षेत्र विश्वविद्यालय के अधिकार क्षेत्र में आ गए। मेरे विचार से, यह एक सबसे न्यायसंगत और न्यायसंगत संशोधन है और यह केवल पीड़ित शिक्षकों को राहत देने के लिए किया गया था और यह किसी भी तरह से पूर्वाग्रह (याचिकाकर्ता या किसी अन्य संबद्ध कॉलेज) नहीं है। मुझे नहीं पता कि याचिकाकर्ता विश्वविद्यालय द्वारा शुरू की गई मध्यस्थता कार्यवाही से क्यों डर रहा है। जैसा कि पहले देखा गया था, यहां तक कि पंजाब विश्वविद्यालय ने भी

याचिकाकर्ता को प्रतिवादी नंबर 3 और अन्य हटाए गए कर्मियों को बहाल करने का निर्देश दिया था। ऐसा होने पर, याचिकाकर्ता के कॉलेज और टीएनई प्रबंधन को अति-तकनीकी आपत्तियों के तहत आश्रय लेने की अनुमति नहीं दी जा सकती है और इस तरह गरीब शिक्षकों को उनकी दया पर नहीं फेंका जा सकता है। अधिनियम की धारा 16 (2) (सी) को भी इस संबंध में लाभ के साथ पढ़ा जा सकता है। इस प्रावधान के तहत, यह स्पष्ट रूप से उल्लेख किया गया है कि 'कार्य-समिति' (कार्यकारी परिषद) द्वारा बनाए गए सभी 'शासन' (अध्यादेश) उस तारीख से प्रभावी होंगे, जैसा कि वह निर्देश दे, लेकिन इस तरह से बनाया गया प्रत्येक अध्यादेश जल्द से जल्द प्रस्तुत किया जाएगा। 'संसद' (न्यायालय) के लिए और 'संसद' (न्यायालय) द्वारा अपनी अगली सफल बैठक में विचार किया जाएगा। वर्तमान मामले में, अध्यादेश को 'संसद' (न्यायालय) द्वारा सर्वसम्मति से अनुमोदित किया गया था और 'कार्य-समिति' (कार्यकारी परिषद) के पास अध्यादेश को प्रभावी बनाने के लिए कोई भी तारीख देने की शक्ति है और, हाथ में मामले में, संशोधन में केवल यह शामिल था कि विनियमन 12.2 के तहत अपील दायर करने की अंतिम तिथि 30 सितंबर होगी। 1974. इसलिए मुझे इस विवाद में भी कोई दम नजर नहीं आता।

(15) याचिकाकर्ता के वकील द्वारा चौथी दलील को बहुत गंभीरता से नहीं लिया गया है क्योंकि वर्तमान याचिका में फैसले को चुनौती नहीं दी गई है। इस प्रकार इस प्रश्न पर निर्णय करना आवश्यक नहीं है। विद्वान वकील द्वारा किसी अन्य बिंदु का आग्रह नहीं किया जाता है। यह अच्छी तरह से स्थापित कानून है कि संविधान के अनुच्छेद 226 के तहत इस न्यायालय के असाधारण अधिकार क्षेत्र को केवल तभी लागू किया जा सकता है जब याचिकाकर्ता के साथ गंभीर या प्रकट अन्याय हुआ हो। वर्तमान मामले में, पंजाब विश्वविद्यालय के नियमों को अपनाने या इसके संशोधन से कोई गंभीर या प्रकट अन्याय या यहां तक कि अन्याय या पूर्वाग्रह नहीं दिखाया गया है। दूसरी ओर, यदि संबंधित विनियमन को अपनाया और संशोधित नहीं किया गया होता, तो इससे कुरुक्षेत्र विश्वविद्यालय के मान्यता प्राप्त कॉलेजों के सैकड़ों शिक्षकों के साथ गंभीर अन्याय होता। शिक्षकों को निजी प्रबंधनों की मनमानी दया पर फेंकने की अनुमति नहीं दी जा सकती है। आक्षेपित नियमों के रूप में इस तरह के सुरक्षा उपायों को कई वर्षों के लंबे संघर्ष के बाद शिक्षक समुदाय द्वारा हासिल किया गया था।

(16) पूर्वगामी कारणों से, मुझे रिट याचिका में कोई दम नहीं दिखता है और इसे लागत के साथ खारिज कर दिया जाता है। वकील शुल्क 500 रुपये।

एन.के.एस.

अस्वीकरण : स्थानीय भाषा में अनुवादित निर्णय वादी के सीमित उपयोग के लिए है ताकि वह अपनी भाषा में इसे समझ सके और किसी अन्य उद्देश्य के लिए इसका उपयोग नहीं किया जा सकता है । सभी व्यवहारिक और आधिकारिक उद्देश्यो के लिए निर्णय का अंग्रेजी संस्करण प्रमाणिक होगा और निष्पादन और कार्यान्वयन के उद्देश्य के लिए उपयुक्त रहेगा ।

रश्मीत कौर

प्रशिक्षु न्यायिक अधिकारी

(Trainee Judicial Officer)

गुरुग्राम, हरियाणा